International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

भारतीय साहित्य में योग– एक विवेचन

दीपक
शोधार्थी
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
Email : deepakkhasa1313@gmail.com

शोध आलेख सार :

प्राचीन काल से ही योग परम्परागत रूप से आज तक प्रचलित है जिसका उल्लेख समय–समय पर साहित्य में हुआ है। हमारे संस्कृत साहित्य में योग का बड़ा ही महत्व रहा है। योग में परमात्मा से मिलने की शक्ति भी पाई जाती है। योग के माध्यम से मनुष्य का तन–मन स्वस्थ रहता है। मनुष्य योग के माध्यम से तनाव रहित एवं सुखी जीवन व्यतीत कर सकता है। अतः वैदिक काल से लेकर आज तक के योग के इतिहास को स्पष्ट करने के लिए साहित्य में योग चर्चा का संक्षिप्त वर्णन आवश्यक है :–

मूल शब्द :

वेद, सांख्ययोग, मंत्रयोग, हठयोग, भक्तियोग, कर्मयोग।

भूमिका :

वेदों में योग : वेदों में अनेक स्थान पर योग शास्त्र में यम–नियम में निहित सत्यादि की शिक्षा दी गई है। अथर्ववेद में इस शरीर के आठ चक्र एवं नव द्वारों वाली देवताओं की अयोध्यापुरी कहा गया है जिसकी ज्योति हिरण्यमय कोश से आवर्त है। ऋग्वेद के अधोलिखित मन्त्र में सत्य एवं अहिंसा का निरूपण हुआ है, जिसका अर्थ है– सत्य को धारण करने वाले सत्कर्मों विद्वज्जन आप लोग अहिंसास्थ व्यवहार को प्राप्त हों। अथर्ववेद के अनेक मंत्रों से ब्रह्मचर्य द्वारा परमात्मा के प्रकटीकरण का कथन है।

स्मृत्तियों मे योग :–

आत्मज्ञान के लिए इन्द्रिय–विग्रह का निर्देश देते हुए मनुस्मृति में अन्यत्र कहा गया है ''जैसे कुशल सारथी घोड़े को वश में रखता है वैसे ही विद्वान व्यक्ति विषयों में विचरण करते हुए इन्द्रियों के विग्रह का प्रयत्न करे।''[1] मनुस्मृति में एक जगह पर योग शास्त्र में निहित यम के सत्यादि का विवेचन करते हुए कहा गया है ''अहिंसा सत्य, आत्रेय गौत्र एवं इन्द्रियनिग्रह– वे चारों वर्णों के लिए उपयुक्त धर्म है।[2] याज्ञवल्क्य स्मृति में भी स्पष्ट किया गया है कि समग्र पापों का नाश करने के लिए साधक को चाहिए कि वह प्राणायाम करे।''[3]

महाभारत में योग :–

महाभारत में अनेक ऐसे उदाहरण विद्यमान हैं जिनमें योग की क्रियाओं का विस्तार से वर्णन है सत्य, समता, दम, मत्सरता का अभाव, क्षमा, लज्जा, तितिक्षा, अनसूया, त्वाग, परमात्मा का ध्यान, आर्यता, निरन्तर स्थिर रहने वाली वृत्ति तथा अहिंसा आदि सत्य के तेरह रूप हैं। उपर्युक्त अहिंसादि से सत्य रूप परमात्मा की प्राप्ति होती है। अतः इन्हें सत्य रूप कहा गया है।

गीता जो कि महाभारत का एक मुख्य अंग है, वह वास्तव में सम्पूर्ण योग ग्रंथ ही है। भगवद्गीता के 700 श्लोकों में योगी, योग, युक्त–युंजन, योग यज्ञः सांख्य योगी इत्यादि युज् धातु से बने शब्द एवं इनके साथ समस्त पद 118 बार आए हैं। गीता के प्रथम 6 अध्यायों में कर्मयोग, मध्य के 6 अध्यायों में भक्तियोग अन्तिम के 6 अध्यायों में ज्ञान योग का वर्णन है।

योग का अर्थ :–

योग का अर्थ जानने से पहले उसके स्वरूप को जानना अति आवश्यक है। चित्त अथवा बुद्धि एवं मन से संयुक्त जीवात्मा के कर्म मलों की शुद्धि हो जाने पर संपूर्ण तत्त्वों के यार्थाथ स्वरूप के प्रत्यक्षीकरण पूर्वक परमात्मा स्वरूप के साक्षात्कार की अवस्था ही योग का यथार्थ स्वरूप है। योग शब्द युज् धातु और घञ् प्रत्यय से बना है। इसका अर्थ है मिलाना या जोड़ना। आत्मा और परमात्मा के सम्मिलन की अनुभूति ही योग है। योग मार्ग द्वारा समाधि

अवस्था में पहुंचने का प्रयास किया जाता है और यह प्रयास वैराग्य तथा अभ्यास द्वारा चित्त वृत्तियों की एकाग्रता से संभव होता है। एकाग्रता चित्त वृत्तियों के निरोध से संभव होती है। ''योगांश्चित वृत्ति निरोधः'' अर्थात् वृत्तियों का बाहरी संसार के नियमों में न भटकना और शांत हो जाना ही निरोध है और इसे ही योग कहा गया है। यद्यपि इस चित्त वृत्ति के निरोध की पूर्णावस्था है, वही योग है। श्रीमद्भगवद्गीता के अनुसार योगानुध्यान में चित्त जहां रम जाता है, वहां परमात्मा को देखकर आत्मा की संतुष्टि होती है। इस स्थिति में अनुचर सुख की अनुभूति होती है तथा मन डिगता नहीं है। कोई वस्तु उसे आकर्षित नहीं कर पाती, मन की इस स्थिति योग है, योग की परिभाषा अनेक विद्वानों व ऋषि–मुनियों ने अपने–अपने अनुभव के आधार पर की है।

योग की परिभाषा :

1. महर्षि पतंजलि द्वारा रचित योगसूत्र के अनुसार– ''योगाश्चितवृत्तिरोधः[4]– अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध ही योग है।
2. ''योग कर्मसु कौशलम्''[5] अर्थात् गीता में कर्मों के कौशल को योग कहा गया है।
3. हठयोग के अनुसार ही 'योग' शब्द समाधि का वाचक है, परन्तु वहां जीवात्मा एवं परमात्मा के संयोग को योग कहा गया है।
4. महर्षि चरक ने मन का इन्द्रिय एवं विषयों से पृथक होकर आत्मा में स्थिर होना ही योग बतलाया है।
5. गीता में 'समत्वं योग उच्चयते' और 'योग कर्म सु कौशलम्' ये दो परिभाषाएं योग की ही हैं। निष्काम भाव से कर्मों को करना ही समत्व है। सम बुद्धि युक्त पुण्य पाप और पुण्य दोनों को इसी लोक में त्याग देता है। कर्मों को निष्काम भाव से, फल की इच्छा न रखकर कर्त्तव्यभाव से करना ही योग है, अमरकोष में योग की ध्यान और संगति का वाचक माना है।
6. वेदान्त के अनुसार– ''जीव और आत्मा के मिलन की संज्ञा ही योग है।''
7. योग वशिष्ट के अनुसार– ''संसार सागर में पार होने की युक्ति को ही योग कहते हैं।''

8. भुज समाधौ, युधिर योग। (धातु पाठ)
9. योगः समाधिः– व्यास भाष्य 2/1
10. अमर कोष में योग को ध्यान और समाधि का वाचक माना है।[6]

योग के प्रमुख भेद :

सांख्य और योग ये प्राचीन मार्ग हैं जिनमें से किसी एक का आश्रय लेकर अन्तिम लक्ष्य (मुक्ति) को प्राप्त किया जा सकता है।[7] ज्ञान योग से सांख्य निष्ठा (स्थिति) और निष्काम कर्मयोग से योग निष्ठा की प्राप्ति होती है। चित्त वृत्ति का नाश करने के दो साधन ज्ञानयोग और योगाभ्यास है। सांख्य के आदि प्रवक्ता कपिल मुनि और योग के आदि आचार्य हिरण्यगर्भ है। सर्वप्रथम योग का उल्लेख करके योग के अवान्तर भेद, मंत्र योग, लययोग, हठयोग, कर्मयोग, का यत्किश्चित दिग्दर्शन किया जाएगा। आधुनिक समय में योग से संबंधित ग्रंथों में जितने प्रकार की योग प्रणालियों का वर्णन मिलता है तथा भिन्न–भिन्न सम्प्रदायों के अनुयायियों ने जितने प्रकार की योग प्रणालियों का वर्णन किया है, उन सबकी गणना की जाए तो वह एक मात्रा में भी ऊपर पहुंच सकती है।

सांख्य योग (ज्ञान योग) :

ज्ञान योग संन्यास योग से सांख्य के ही नाम हैं। यम – सम्यक+ख्या–ख्याति। ज्ञान को सांख्य कहते हैं। प्रकृति के विकार महतत्व (बुद्धि) अहंकार पंचतंमात्रा पांच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, मन और पाँच स्थूल भूत इन चौबीस तत्वों का साक्षात्कार योगाभयास और ज्ञानयोग द्वारा (विवेक) द्वारा धरना शरीर के पाँच कोष अन्नमय कोष, प्राणमय कोष, मनोमय कोष, विज्ञानमय कोष व आनन्दमय कोषों का ज्ञान प्राप्त करके प्रकृति के विचार मन, बुद्धि इन्द्रियादि विषयों का ग्रहण करने वाले हैं और शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध ये ग्राह्म हैं तथा प्रकृति के विकार हैं। इस प्रकार गुण ही गुणों में प्रवृत्त हो रहे हैं। यह जानकर अपने को इनसे पृथक और आकर्ता समझना।[8] और अपने को ब्रह्मस्थ, ब्रह्म के समीप समझकर सदैव उसके स्वास्थ्य का चिन्तन ज्ञान योग कहलाता है।

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

मन्त्र योग :

अभ्यास के प्रारम्भ करने के समय था अल्पबुद्धि सावकों के लिए मन्त्रयोग का विधान किया है।[9] परन्तु इस कारण उसका महत्व कम नहीं हो जाता। मन्त्र योग में परम पवित्र गायत्री मंत्र का प्रणव (ओउम्) का जप अथवा अन्य किसी अनिष्ट मन्त्र का जप किया जाता है। यदि मंत्र के साथ श्वास–प्रश्वास की ताल बद्धता और अर्थ चिन्तन भी किए जाए तो मन को एकाग्र करने में बहुत सहायता मिलेगी।

हठ योग :

इसे प्राण योग या कुण्डलिनी योग भी कहते हैं। हठ योग में सूर्य स्वर यर्थात् पिंगला नाड़ी और चन्द्र स्वर अर्थात् इड़ा नाड़ी का वाचक है। ये दोनों नाड़ियाँ सुषुम्ना के दाहिने बायें सहस्त्रा चक्र से मुलाधार चक्र तक सामान्य अवस्था में प्राण इन दोनों नाड़ियों से प्रवाहित होता है। इन दोनों नाड़ियों के प्राण को मिलाकर उसे सुषम्ना में प्रवाहित करना अर्थात् हकार और उकार को मिलाना ही हठ योग का प्रयोजन है।[10] हठ योग का उद्देश्य केवल राजयोग (समाधि), प्राप्ति के लिए है। बिना हठ योग के राजयोग सिद्ध नहीं होता और बिना राजयोग के हठयोग निष्फल है। अतः इन दोनों का ही एक साथ अभ्यास करना चाहिए।

कर्मयोग :

योग में आरूढ़ होने की इच्छा वाले मननशील पुरूष के लिए निष्काम भाव से कर्म करना ही योग प्राप्ति का हेतु या साधन कहा है।[11] अपने वर्ण, आश्रम, स्वभाव और परिस्थिति के अनुसार शास्त्र विहिन कर्मों की फल की कामना और आसक्ति का त्याग करके कर्त्तव्य सममक्त करना, प्रत्येक कर्म की सिद्धि असिद्धि तथा उसके फल में समभाव रखना, इन्द्रियों के भोगों में आसक्त करना ही कर्मयोग है।[12] अर्थात् भाव से कर्म करते हुए योगाभ्यास करना कर्मयोग कहलाता है।

''योगः कर्मसु कौशलम्।

साधारणजन के कर्म पाप, पुण्य या दोनों प्रकार के होते हैं, परन्तु योगी के कर्म इन तीनों से अलग निष्काम और कर्त्तव्य पालन के लिए होते हैं। निष्काम कर्म के द्वारा योगारूढ़ होकर पुनः सब संकल्पों का परित्याग करना ही कल्याण का हेतु है।

भक्ति योग :–

परमेश्वर के गुणों में प्रीति उसके गुणों का कीर्तन, स्तुति करना एवं अपने को सर्वथा उनके अधीन मानकर समस्त धर्म और उसका फल भगवान को अर्पण कर देना, भगवान के प्रत्येक विधान में सन्तुष्ट रहना तथा निरन्तर उसके नाम का स्मरण करते रहना ही भक्तियोग है। भक्तियोग से अति शीघ्र समाधि की प्राप्ति होती है।[13] भक्ति ईश्वर के प्रति तीव्र अनुराग और दिव्य प्रेम स्वस्थ है।[14] भक्ति योग का विस्तृत वर्णन नारद भक्ति सूत्र में किया है। यहां उनमे से कुछ महत्वपूर्ण सूत्रों का भावार्थ ही दिया है।

उपसंहार :

उपर्युक्त के आधार पर कहा जा सकता है कि योग का मनुष्य जीवन में कितना महत्व होता है। वेदों एवं शास्त्रों में भी योग के महत्व को दर्शाया गया है। उनमें तो मन्त्र–योग, हठ योग एवं भक्तियोग को योग ही बताया है। अतः यह कहा जा सकता है कि योग मनुष्य के जीवन में सकारात्मक परिवर्तन के साथ सुख एवं आनन्द भी प्रदान करता है।

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

सन्दर्भ–सूची :–

---

[1] मनुस्मृति 2/88

[2] वही 10/63

[3] याज्ञवल्क्य स्मृति 4/64

[4] पातंजल योगसूत्र, 1/2

[5] गीता 2/50, महर्षि पतंजलि से ईश्वर प्राशिधानं का सूत्र 1/23 में इसी योग का अभियान लिखा है।

[6] योगः सन्नहनोपाय ध्यान् युक्तिषु (अमर कोष)

[7] लोकेडरिमन् दिविद्या निष्ठापुरा प्रोक्ता भवानध ज्ञान योगेन सांख्यानां धर्म योगिनाम्– गीता 6/46

[8] गीता 3/28

[9] योग तत्त्वोपनिषद्–22

[10] हकारेच्यते सूर्यवठकारश्चन्द्र उच्चते।
सूर्याचन्द्र मसोर्योगा इन योगाउमिधीयते। (ह.प्र.)

[11] गीता 6/3

[12] गीता 02/50

[13] ईश्वर प्रणिधानाद वा (योग 1/23)

[14] सात्वस्मिन परम प्रेमरूपा, अमृतरूपा च (नारद भक्ति सूत्र)